धर्म विहीन नहीं मज़हब विहीन कहिये

तमिलनाडु में एक स्नेहा नामक महिला ने स्थानीय सचिवालय से अपने निजी “No Caste No Religion” अर्थात” जाती विहीन और धर्म विहीन” लिखा हुआ प्रमाण पत्र प्राप्त किया है। इस प्रमाण पत्र के लिए उक्त महिला ने 9 वर्षों तक प्रतीक्षा की हैं। उक्त महिला का कहना है कि यह जाति विहीन और धर्म विहीन समाज को बढ़ावा देना चाहती हैं। इस महिला के कदम को अनेक स्वघोषित बुद्धिजीवी सकारात्मक पहल की शुरुआत, एक आदर्श समाज की स्थापना की ओर, मानवता के लिए सही सोच आदि कहकर महिमामंडित करेंगे। क्यूंकि इससे उनका नास्तिकता को बढ़ावा देने की रणनीति को समर्थन मिलता प्रतीत होता हैं। मगर यह केवल शब्दजाल का आडम्बर है। अगर हम सूक्षम्ता से वैदिक सिद्धांतों के अंतर्गत इस शब्दावली की परीक्षा करेंगे तो हम इस रहस्य को समझ पाएंगे।

वैदिक सिद्धांतों के अनुसार हमारी केवल एक जाति है। वह है “मनुष्य”। एक समान दिखने वाले, एक समान संतान उत्पन्न करने वाले समूह को जाति कहा जाता हैं। इससे भिन्न जाति पशु, जीव-जंतु आदि है। अगर आप सकल सृष्टि के हर व्यक्ति को मनुष्य जाति का मानेंगे तो आपको जाति विहीन समाज की कल्पना करने की कोई आवश्यकता ही नहीं हैं। इसी प्रकार से धर्म शब्द को लेकर भी बहुत भ्रांतियां हैं। धर्म संस्कृत भाषा का शब्द है। जोकि धारण करने वाली धृ धातु से बना हैं। “धार्यते इति धर्मः” अर्थात जो धारण किया जाये वह धर्म है अथवा लोक परलोक के सुखों की सिद्धि के हेतु सार्वजानिक पवित्र गुणों और कर्मों का धारण व सेवन करना धर्म है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते है कि मनुष्य जीवन को उच्च व पवित्र बनाने वाली ज्ञानानुकुल जो शुद्ध सार्वजानिक मर्यादा पद्यति है। वह धर्म है। धर्म तो एक ही है। सदाचार युक्त जीवन जीना धर्म कहलाता है। बाकि सब तो मत-मतान्तर है। धर्म और मत/मज़हब में भेद को इस लेख के माध्यम से जानें।

1. धर्म और मज़हब समान अर्थ नहीं है। और न ही धर्म ईमान या विश्वास का प्राय : है।

2. धर्म क्रियात्मक वस्तु है। मज़हब विश्वासात्मक वस्तु है।

3. धर्म मनुष्य के स्वभाव के अनुकूल अथवा मानवी प्रकृति का होने के कारण स्वाभाविक है। और उसका आधार ईश्वरीय अथवा सृष्टि नियम है। परन्तु मज़हब मनुष्य कृत होने से अप्राकृतिक अथवा अस्वाभाविक है। मज़हबों का अनेक व भिन्न भिन्न होना तथा परस्पर विरोधी होना उनके मनुष्य कृत अथवा बनावती होने का प्रमाण हैं।

4. धर्म के जो लक्षण मनु महाराज ने बतलाये है। वह सभी मानव जाति के लिए एक समान है और कोई

भी सभ्य मनुष्य उसका विरोधी नहीं हो सकता। मज़हब अनेक हैं। और केवल उसी मज़हब को मानने वालों द्वारा ही स्वीकार होते हैं। इसलिए वह सार्वजानिक और सार्वभौमिक नहीं है। कुछ बातें सभी मजहबों में धर्म के अंश के रूप में है। इसलिए उन मजहबों का कुछ मान बना हुआ है।

5. धर्म सदाचार रूप है। अत : धर्मात्मा होने के लिये सदाचारी होना अनिवार्य है। परन्तु मज़हबी अथवा पंथी होने के लिए सदाचारी होना अनिवार्य नहीं है। अर्थात जिस तरह तरह धर्म के साथ सदाचार का नित्य सम्बन्ध है। उस तरह मजहब के साथ सदाचार का कोई सम्बन्ध नहीं है। क्यूंकि किसी भी मज़हब का अनुनायी न होने पर भी कोई भी व्यक्ति धर्मात्मा (सदाचारी) बन सकता है। परन्तु आचार सम्पन्न होने पर भी कोई भी मनुष्य उस वक्त तक मज़हबी अथवा पन्थाई नहीं बन सकता। जब तक उस मज़हब के मंतव्यों पर ईमान अथवा विश्वास नहीं लाता। जैसे की कोई कितना ही सच्चा ईश्वर उपासक और उच्च कोटि का सदाचारी क्यूँ न हो। वह जब तक हज़रात ईसा और बाइबिल अथवा हजरत मोहम्मद और कुरान शरीफ पर ईमान नहीं लाता तब तक ईसाई अथवा मुस्लमान नहीं बन सकता।

6. धर्म ही मनुष्य को मनुष्य बनाता है अथवा धर्म अर्थात धार्मिक गुणों और कर्मों के धारण करने से ही मनुष्य मनुष्यत्व को प्राप्त करके मनुष्य कहलाने का अधिकारी बनता है। दूसरे शब्दों में धर्म और मनुष्यत्व पर्याय है। क्यूंकि धर्म को धारण करना ही मनुष्यत्व है। कहा भी गया है- खाना,पीना,सोना,संतान उत्पन्न करना जैसे कर्म मनुष्यों और पशुओं के एक समान है। केवल धर्म ही मनुष्यों में विशेष है। जोकि मनुष्य को मनुष्य बनाता है। धर्म से हीन मनुष्य पशु के समान है। परन्तु मज़हब मनुष्य को केवल पन्थाई या मज़हबी और अन्धविश्वासी बनाता है। दूसरे शब्दों में मज़हब अथवा पंथ पर ईमान लेन से मनुष्य उस मज़हब का अनुनायी अथवा ईसाई अथवा मुस्लमान बनता है। नाकि सदाचारी या धर्मात्मा बनता है।

7. धर्म मनुष्य को ईश्वर से सीधा सम्बन्ध जोड़ता है और मोक्ष प्राप्ति निमित धर्मात्मा अथवा सदाचारी बनना अनिवार्य बतलाता है। परन्तु मज़हब मुक्ति के लिए व्यक्ति को पन्थाई अथवा मज़हबी बनना अनिवार्य बतलाता है। और मुक्ति के लिए सदाचार से ज्यादा आवश्यक उस मज़हब की मान्यताओं का पालन बतलाता है। जैसे अल्लाह और मुहम्मद साहिब को उनके अंतिम पैगम्बर मानने वाले जन्नत जायेगे। चाहे वे कितने भी व्यभिचारी अथवा पापी हो जबकि गैर मुसलमान चाहे कितना भी धर्मात्मा अथवा सदाचारी क्यूँ न हो। वह दोज़ख अर्थात नर्क की आग में अवश्य जलेगा। क्योंकि वह कुरान के ईश्वर अल्लाह और रसूल पर अपना विश्वास नहीं लाया है।

8. धर्म में बाहर के चिन्हों का कोई स्थान नहीं है। क्योंकि धर्म लिंगात्मक नहीं हैं -न लिंगम धर्मकारणं अर्थात लिंग (बाहरी चिन्ह) धर्म का कारण नहीं है। परन्तु मज़हब के लिए बाहरी चिन्हों का रखना अनिवार्य है। जैसे एक मुसलमान के लिए जालीदार टोपी और दाढ़ी रखना अनिवार्य है।

9. धर्म मनुष्य को पुरुषार्थी बनाता है। क्योंकि वह ज्ञानपूर्वक सत्य आचरण से ही अभ्युदय और मोक्ष प्राप्ति की शिक्षा देता है। परन्तु मज़हब मनुष्य को आलस्य का पाठ सिखाता है क्योंकि मज़हब के मंतव्यों मात्र को मानने भर से ही मुक्ति का होना उसमें सिखाया जाता है।

10. धर्म मनुष्य को ईश्वर से सीधा सम्बन्ध जोड़कर मनुष्य को स्वतंत्र और आत्म स्वावलंबी बनाता है।

क्योंकि वह ईश्वर और मनुष्य के बीच में किसी भी मध्यस्थ या एजेंट की आवश्यकता नहीं बताता। परन्तु मज़हब मनुष्य को परतंत्र और दूसरों पर आश्रित बनाता है क्योंकि वह मज़हब के प्रवर्तक की सिफारिश के बिना मुक्ति का मिलना नहीं मानता। इस्लाम में मुहम्मद साहिब अल्लाह एवं मनुष्य के मध्य मध्यस्थ की भूमिका निभाते हैं।

11. धर्म दूसरों के हितों की रक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति तक देना सिखाता है। जबकि मज़हब अपने हित के लिए अन्य मनुष्यों और पशुओं के प्राण हरने के लिए हिंसा रुपी क़ुरबानी का सन्देश देता हैं। वैदिक धर्म के इतिहास में ऐसे अनेक उदहारण है, जिसमें गौ माता की रक्षा के लिए हिन्दू वीरों ने अपने प्राण न्योछावर कर दिए।

12. धर्म मनुष्य को सभी प्राणी मात्र से प्रेम करना सिखाता है। जबकि मज़हब मनुष्य को प्राणियों का माँसाहार और दूसरे मज़हब वालों से द्वेष सिखाता है। जिहादी आतंकवादी इस बाद का सबसे प्रबल प्रमाण है।

13. धर्म मनुष्य जाति को मनुष्यत्व के नाते से एक प्रकार के सार्वजनिक आचारों और विचारों द्वारा एक केंद्र पर केन्द्रित करके भेदभाव और विरोध को मिटाता है। तथा एकता का पाठ पढ़ाता है। परन्तु मज़हब अपने भिन्न भिन्न मंतव्यों और कर्तव्यों के कारण अपने पृथक पृथक जत्थे बनाकर भेदभाव और विरोध को बढ़ाते और एकता को मिटाते है। संसार में धर्म के नाम पर भेदभाव एवं फुट का यही कारण है।

14. धर्म एक मात्र ईश्वर की पूजा बतलाता है। जबकि मज़हब ईश्वर से भिन्न मत प्रवर्तक/गुरु/मनुष्य आदि की पूजा बतलाकर अन्धविश्वास फैलाते हैं।

धर्म और मज़हब के अंतर को ठीक प्रकार से समझ लेने पर मनुष्य अपने चिंतन मनन से आसानी से यह स्वीकार करके के श्रेष्ठ कल्याणकारी कार्यों को करने में पुरुषार्थ करना धर्म कहलाता है। इसलिए उसके पालन में सभी का कल्याण हैं। अगर इस परिभाषा का यथार्थ रूप में पालन किया जाये तो धर्म विहीन के स्थान पर मत/मज़हब विहीन समाज की आवश्यकता हैं।

अंतत " जाती विहीन और धर्म विहीन" के स्थान पर वेद विदित एक मनुष्य जाति एवं धर्म युक्त /मज़हब विहीन समाज ही आदर्श समाज हैं। यह नास्तिक नहीं अपितु पूर्णत: आस्तिक और सत्यता पर आधारित समाज का मूल स्वरुप हैं।

(लेखक अध्यात्मिक विषयों पर शोधपूर्ण लेख लिखते हैं)